P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-2) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

ज्ञान के विभिन्न आयाम

मणिमाला शर्मा
आचार्य,
दर्शन शास्त्र विभाग,
चौ. बल्लू राम गोदारा
राजकीय महाविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान, भारत

सारांश

पियर्स के अनुसार मनुष्य सतत् संघर्षशील प्राणी है। उसे अनुकानक समस्याओं का सामना करना रहता है और उसकी सफल क्रियाओं पर ही उसकी सुरक्षा निर्भर है। विश्वास की स्थिति में ''विश्वास[1] हमें तुरन्त क्रिया करने के लिए बाहय नही करता, बल्कि हमें ऐसी स्थिति में रखता है कि अवसर आने पर हम किसी निश्चित ढगं का व्यवहार करेगें।

संदेहों[2] की स्थिति अंसतोष और बैचेनी की अवस्था है। व्यक्ति इस स्थिति से स्वयं को मुक्त कर विश्वास की अवस्था में पहुंचना चाहता है। यह शांत और संतोषप्रद अवस्था है और इसे किसी अन्य विश्वास से बदलना नहीं चाहते।

मुख्य शब्द : ज्ञान, उत्तेजना, क्रियाशीलता, अन्वेष–प्रक्रिया, विभिन्न आयाम।

प्रस्तावना

हमारे सभी विश्वास कार्य करने के साधन–नियम है, किसी विचार के अर्थ के समझने के लिए हमें देखना है कि वह किस प्रकार के आचरण व्यवहार को जन्म दे रहा है? जो विचार 'व्यवहार', 'कार्य', 'आचरण' आदि पर जोर देता है, वह उपयोगितावादी हो जाता है। उपयोगितावाद का दर्शन 'व्यवहार' को केन्द्रीय स्थान देता है।

वैचारिक प्रक्रिया अन्वेषण की प्रक्रिया है जिसका प्रारम्भ संशय से है तथा जिसका लक्ष्य विश्वास की स्थापना है।

संशय की स्थिति में कुछ प्रश्नचिन्ह खड़े हो जाते है विश्वास की स्थिति में लगता है कुछ निर्णय ले और दे भी सकते है। संशय अशांन्ति की अवस्था है। इसमें अनिश्चयता और उत्तेजना होती है और क्षोभ भी होता है क्यूंकि उत्तेजना से मुक्ति की प्रवृत्ति रहती है। विश्वास शान्तावस्था है। संशय निष्क्रियता की स्थिति नही क्रियाशीलता का उपादान है और यह क्रियाशीलता तब तक चलती रहती है जब तक विश्वास स्थापित न हो जाय। संशय एक प्रकार के वैचारिक संघर्ष को जन्म देता है। [1] जिसकी समाप्ति विश्वास की स्थापना के साथ होती है। विश्वास की स्थापना अन्वेष–प्रक्रिया का अन्तिम छोर है, लक्ष्य है।

'विश्वास की स्थापना' का अर्थ मत या राय निश्चित करना है। उस मत या राय का सत्य होना अनिवार्य नहीं है। जैसे ही कोई विश्वास उभरता है तो उसमें यह भी विश्वास रहता है कि वह सत्य है। [2] वस्तुतः सत्य है या नहीं इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

सत्यता, ज्ञान, विश्वास आदि के विचार में भ्रामकत्वता निहित है। ऐसा कोई विचार ज्ञान नहीं है जो भ्रामक सिद्ध न हो सके। हर विचार, हर ज्ञान अस्थायी तथा सामयिक होता है, तथा तभी तक मान्य है जब तक उसमें निहित दोष स्पष्ट न हो जाय।

पर्स के अनुसार विश्वासों के अर्थ का आधार तथा दो विश्वासो के अन्तर का आधार आदत है। विश्वास एक विशेष परिस्थिति में एक विशेष ढंग से कार्य करने का संकल्प है। कार्य करने का यही नियम आदत है। अतः विचारो तथा विश्वासो का अर्थ निरूपण 'आदत' के ही संदर्भ में हो सकता है। आदत की सार्थकता कार्य अथवा व्यवहार द्वारा सिद्ध होती है। अर्थ निरूपण का आधार अन्ततः क्रियाओं–व्यवहारो में है। पर्स की वैज्ञानिक भाषा में जिसका अर्थ निरूपण होता है, वह वस्तुतः एक चिन्ह है। किसी चिन्ह, (वह भाव हो) या प्रस्तावना की अर्थ निर्णयता का आधार व्यवहारो में है।

पर्स से पहले अर्थ के तीन सिद्धान्त प्रचलित थे –

1. सार निर्देश के रूप में अर्थ।
2. निर्देशात्मक अर्थ सिद्धान्त।
3. प्रतिमामूलक अर्थ सिद्धान्त।

किन्तु पर्स की दृष्टि में इन सभी सिद्धान्तो में एक मौलिक दोष है। ये सभी किसी न किसी रूप में अर्थ की खोज मात्र संज्ञानात्मक उपकरणो में करने की चेष्टा करते है। वे ध्यान नही देते कि अर्थ की जड़े क्रियात्मकता में, व्यवहार में है।

पर्स के अर्थ सिद्धान्त को संक्रियात्मक अथवा व्यवहारमूलक अर्थ सिद्धान्त कहते है। जिसके अनुसार अर्थ का मूल व्यवहार अथवा क्रियाओं में है। पर्स के अनुसार जिसका हम अर्थ ढूढतें है वह कोई 'वस्तु' नहीं, 'प्रतिमा' अथवा भाव भी नहीं है। पर्स के अनुसार हम चिन्हों का अर्थ निरूपण करते है। व्यापक अर्थ में चिन्ह के अन्तर्गत 'भाव', 'विचार' विश्वास, शब्द आदि सभी चले आते है। [3] पर्स अपने अर्थ सिद्धान्त को बौद्धिक चिन्ह (Intellectual - concepts) तक सीमित कर देते है।

हमारे विचार के जो विषय है, उनके विषय में सोचा जा सकता है कि किस प्रकार के व्यवहार में वे फलीभूत हो सकती है। ऐसे ही फलों के विचार से उस वैचारिक विषय का अर्थ निर्धारित होता है। [4]

पर्स के अनुसार अर्थ देने का अर्थ एक शब्द के लिए दूसरा शब्द देना नहीं है। अर्थ का अर्थ स्पष्टता अथवा प्राजंलता है (Clarity of apprehension)। अर्थ निरूपण एक प्रकार की अनुवाद प्रक्रिया है जिसमें किसी चिन्ह के लिए एक वैचारिक स्थिति उपस्थित की जाती है जिसमें यह स्पष्ट होता है कि यदि एक प्रकार की क्रिया हो तो उसका फल एक होगा। फलो के विचार द्वारा चिन्ह का अर्थ स्पष्ट हो इस प्रक्रिया को हम चार–स्तरो में रख सकते हे। –

अध्ययन का उद्देश्य

समकालीन पाश्चात्य दर्शन के अर्थ क्रियावादी दार्शनिक पियर्स कहते है कि जब एक बार किसी संप्रत्य को अभिव्यक्त करने के लिए उपयुक्त तथा पर्याप्त शब्द दिये जा चुके हो तो फिर उन्ही वस्तुओं को व्यक्त करने के लिए दूसरे शब्दों का प्रयोग तब तक नही किया जाय जब तक उन वस्तुओं को उन्ही संबंधों में लिया जाता रहे।

पियर्स एक वैज्ञानिक थे और दर्शन को प्राकृतिक विज्ञानों की भांति नयी तुली भाषा देना चाहता था। प्रस्तुत लेख में संशय का निराकरण कर विश्वास की स्थापना की प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

सोपाधिकता का स्तर

सर्वप्रथम सोपाधिक विचार जागता है जिसे हेत्वाश्रित रूप में रखा जा सकता है। अर्थात यदि इस प्रकार की क्रिया करे तो अमुक फल होगा।

व्यवहार का स्तर

इसमें कुछ निश्चित प्रयोगों का विचार आता है।

पूर्वसूचक स्तर

इसमें उक्त प्रयोगों के अनुमानित फल के विषय में विचार आता है।

फलो के अनुभव का स्तर

इस स्तर में हर प्रक्रिया के अनुमानित फलों का बोध होता है।

इन्ही फलों के माध्यम से बोध स्पष्ट होता है। किसी चिन्ह का अर्थ अन्तिम अथवा निश्चित रूप में तय नही होता है। अर्थ, अर्थ बोध है। ऐसे ही अनुमानित फलो के विचार द्वारा अर्थ स्पष्ट होता है।

विशेषतायें

1. अर्थ सिद्धान्त में कोई विशिष्ट प्रयोग नही होता प्रयोग के सम्बन्ध में विचार होता है।
2. अर्थ जानने के लिए कुछ करके नहीं देखना होता, बल्कि सोचना पड़ता है कि ऐसी परिस्थिति में कोई यदि एक प्रकार की क्रिया करे तो उसका क्या फल होगा? अर्थात प्रयोग नहीं, प्रयोगात्मक स्थिति का विचार है।
3. अर्थ के लिए जब 'क्रियाओं' की बात करते है, तो वे क्रियायें वास्तविक सम्पादित क्रियायें नही है। बल्कि क्रिया विचार है। (conceived action)।
4. ऐसा सोचा जाता है कि किसी शब्द या अवधारणा का अर्थ उसके व्यवहार या व्युत्पति के पहले तय होता है। इसी कारण अर्थ में एक प्रकार की निश्चयता मिली होती है। पर्स के अनुसार भूत की ज्ञानात्मक उपलब्धियों का हाथ अर्थ निरूपण में जो भी हो, अर्थ निरूपण प्रक्रिया का संबंध भविष्य से भी है।
5. पर्स की महत्वपूर्ण उक्ति 'व्यावहारिक क्रिया परिणाम, (Bearings) का तात्पर्य यह सोचना है कि जिसका अर्थ ढूढना है उसके धारण करने से क्रिया या व्यवहार में क्या अन्तर पडेगा।
6. जेम्स ने पर्स की उक्त पंक्तियों के आधार पर 'उपयोगिता' को अर्थ एवं सत्य का आधार बना दिया। जबकि पर्स का अभिप्राय यह नही था। अर्थ निरूपण की प्रक्रिया उपयोगिता के विषय में नहीं सोचती। 'व्यवहारिकता' तथा 'उपयोगिता– को पर्स एक नहीं मानते।
7. पर्स कहते है जिसका अर्थ निरूपण होता है वे चिन्ह हैं। क्योंकि वे कोई बोध नहीं देते जब हम किसी शब्द का व्यवहार किसी भाव या अवधारणा के लिए करते है, तो हम समझते है कि उस शब्द का अर्थ वह अवधारणा है। किन्तु वस्तुतः दोनो चिन्ह ही है – एक शाब्दिक चिन्ह तथा दूसरा अवधारणात्मक। वे चिन्ह मात्र इसलिए है कि वे स्वयं अपना अर्थ बोध देने में असमर्थ है, क्रिया – विचार से उनका अर्थ स्पष्ट होता है और अब वे उस अर्थ को सूचित करते है।
8. अर्थ सिद्धान्त का उद्देश्य केवल बौद्धिक अवधारण (Intellectual - concepts) के अर्थ निरूपण से है। अर्थात वे भाव जो विचार के लिए तथा बोध के लिए प्रासंगिक हो।
9. पर्स सहज रूप में स्वीकारते है कि व्यक्ति को अर्थ बोध अपने अपने ढंग से होता है। दो व्यक्तियों का अर्थ बोध सर्वथा एक समान तथा एक ढंग का नही होता।

   पर्स के अनुसार इसका यह अर्थ नहीं कि अर्थ बोध के अन्तर के कारण दो व्यक्तियों में बातचीत असम्भव है। जिस भाव का अर्थबोध दो व्यक्तियों में सर्वथा भिन्न है, उस विषय पर स्वभवतः दोनों में बात नहीं हो सकती । किन्तु जिन भावो के संबंध में बात

होती है या हो सकती है, उसके साथ सन्दर्भ दूसरा हैं पर्स इसे दो ढंग से व्यक्त करते है। एक तो उनका कहना है कि जब किसी भाव के क्रियाफल पर कोई विचार करता है, तो उसके उस विचार में सार्वभौमिकता होती है। उस विचार की सार्थकता इसी बात में है कि व्यक्ति को लगे कि जो कोई इस भाव पर विचार करेगा उसे भी क्रियाफल संबंधी वैसा ही विचार आयेगा, जैसा उसे आ रहा है।

दूसरा ढंग अधिक स्पष्ट तथा सहज ज्ञान के अनुरूप है। 'कड़ा– के संबंध में दो व्यक्ति बात कर सकते है। यह ठीक है कि इसका अर्थ बोध भी हर व्यक्ति को बिल्कुल एक जैसा होता है – ऐसा कहने का कोई आधार नहीं है। अर्थबोध की भिन्नता के रहते हुए भी बातचीत सम्भव है क्योंकि अर्थबोध में कुछ अंशी की समानता है। उसी समानता के आधार पर बात होती है। यदि अर्थबोध सर्वथा भिन्न हो, तो बातचीत में व्यामिश्र, भ्रान्ति, अनर्गलता आदि का प्रवेश हो जाएगा। अतः पर्स का अर्थबोध सिद्धान्त सहज ज्ञान के अनुरूप है। यद्यपि पर्स का अर्थ – सिद्धज्ञन्त ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ क्योंकि एक तो जेम्स ने इसे उपयोगितावाद के दर्शन के आधार का रूप दे दिया, दूसरा यह अपने ढंग से सत्य के सत्यापन सिद्धान्त का स्रोत सिद्ध हुआ। तथापि इसमें भ्रान्तियां और दोष होने के कारण इसकी आलोचना भी हुयी :–

1. पर्स के सिद्धान्त की दूसरी मूल अवधारण 'व्यवहारवादिता' (Practical - Bearings) अस्पष्ट ही रह गया।
2. अर्थ सिद्धान्त की दूसरी मूल अवधारणा 'क्रियाफल – विचार' (Conceivable effects) भी अस्पष्ट है। प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या किसी भाव पर विचार करने पर उसके सभी क्रियाफल स्पष्ट होते है। पर्स का कहना है कि हर भाव का अर्थबोध हर व्यक्ति को अलग–अलग होता है। परन्तु तब तार्किक रूप से यह स्वीकारना होगा कि कोई दो व्यक्ति किसी एक विषय पर बात नही कर सकतें यदि दो अर्थबोधो में कुछ समानता रहे तब भी उनकी भिन्नता के फलस्वरूप यह स्वीकारना पड़ता है कि दोनो वस्तुतः एक विषय पर बात नही कर रहे।
3. पर्स जब 'कड़े' का उदाहरण देते है तो कहते है कि इस पर विचार से कुछ क्रियाफल विचार स्पष्ट होते है। जैसे खरोचने से खरोंच नही आयेगी। प्रश्न है कि यदि पहले से 'कड़े' के विषय में कोई जानकारी न रहे तो ऐसा विचार कैसे उत्पन्न होगा। समस्या उत्पन्न होती है कि जिसकी कोई जानकारी न हो उसका विचार उत्पन्न ही नही होगा। यह भी समस्या है कि जिसकी कोई जानकारी न हो उसका विचार उत्पन्न ही नही होगा। यदि कोई सर्वथा नवीन भाव प्रस्तुत करता है तो उसके लिए जिसे उसकी कोई जानकारी नही है वह कोई अर्थबोध नही दे सकता। ''पहली जानकारी कैसे होती है?'' – तो फिर क्या हम इसे अर्थ – सिद्धान्त करेगें?
4. यह सिद्धान्त अर्थ – निरूपण का ढंग देता है या अर्थपूर्णता का मापदण्ड – यह भी स्पष्ट नही है।

निष्कर्ष

पुराने विचारों, विश्वासों तथा सिद्धान्तों के सम्पूर्णतः तिरस्कार का कोई प्रश्न नही उठता। नवीन विचार उससे अच्छा कहा जा सकता है, क्योंकि यह कुछ और तथ्यों की व्याख्या कर देता है। किन्तु नवीन विचार ने पुराने विचारों को सम्पूर्णतः खंडित नही किया, केवल थोड़ा विस्तार कर दिया है। कार्य अतः प्राचीन और नवीन के बीच समन्वय का कार्य महत्वपूर्ण है।

अंत टिप्पणी

1. *"Doubt is an uneasy and dissatisfied state from which we struggle to free ourselves and pass into the state of belief ….." Philosophy of Recent Times [Vol. I, pera 372]*
2. *(i) "The irritation of doubt causes struggle to attain a state of belief: I shall term this struggle Inquiry……." Philosophy of Recent Times [Vol. I, pera 374]*
   (ii) "That the settlement of opinion is the sole end of inquiry is a very important proposition." Philosophy of Recent Times [Vol. I, pera 375]
3. *"The medium of connecting bond between the absolute first and last." Philosophy of Recent Times [Vol. I, pera 337, P. 427]*
4. *"That for which is stands is called its object, that which it conveys its meaning, and the idea to which it gives rise, its interpretant." Philosophy of Recent Times [Vol. I, pera 339, P. 428]*
5. *William Barrett; philosophy in the twentieth ecntury (An Anthology) P.193*
6. *William Barrett; philosophy in the twentieth ecntury (An Anthology) P.193*